ISSN 2349-638X

REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL

AAYUSHI INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY RESEARCH JOURNAL (AIIRJ)

MONTHLY PUBLISH JOURNAL

VOL-I | ISSUE- VII | DEC. | 2014

Address
- Vikram Nagar, Boudhi Chouk, Latur.
- Tq. Latur, Dis. Latur 413512
- (+91) 9922455749, (+91) 9158387437

Email
- editor@aiirjournal.com
- aiirjpramod@gmail.com

Website
- www.aiirjournal.com

CHIEF EDITOR – PRAMOD PRAKASHRAO TANDALE

आदिवासी साहित्य में असुरक्षित पहचान के प्रति विद्रोह

डॉ.सुनील जाधव,
महाराणा प्रताप हाउसिंग सोसाइटी,
हनुमान गढ़ कमान के सामने,
नांदेड-४३१६०५,महाराष्ट्र
सम्पर्क/ हाइक /वाट्स एप / टेलीग्राम नंबर ०९४०५३८४६७२

मूलनिवासी आदिवासियों का संघर्ष आर्यों से हुआ था | बाहर से आये आर्यों द्वारा अपनी ही जमीन से पराजित होकर वे पीछे हट तो गये थे | पर उन्होंने नदी, नालों, झरनों, पहाड़ो, जंगलों की गोद में रह कर अपना संघर्ष जारी रखा था | देव-दानव, देव-असूर, देव-राक्षस आदि के रूप में पौराणिक सन्दर्भ में आदिवासी, मूलनिवासी अपने जल, जमीन, जंगल के लिए लड़ते रहे थे | वह संघर्ष आज तक बदले हुए रूप में देखा जा सकता है | आदिवासी भोले, निच्छल, कर्मठ, सीधे थे | ईसी सीधेपन का फायदा तब से लेकर आज तक उठाया ही जा रहा है | स्वरक्षा, अस्तित्व, भूमि की रक्षा हेतु उन्हें समय-समय पर विभिन्न मार्गों का सहारा लेना पढ़ा था | जंगल में रहने वाला मूलनिवासी वनस्पति शास्त्र, शिकार, खेती, जादू-टोना, पशु-पक्षी शास्त्र आदि में उसने अपने-आप को पारंगत कर लिया था | जगल में रहकर उन्होंने अपने रीति-रीवाज, उत्सव, वेश-भूषा, खान-पान, बोली-भाषा, लोकगीत, लोककथा, लोकनाट्य, लोकनृत्य. लोकसंगीत, खेल, ईश्वर आदि को अपने मापदंड पर जीवित रखा | आदिवासियों ने अपनी संस्कृति को बनायें रखा | आदिवासियों की संस्कृति, आदिवासियों की अस्मिता, उनके अपने अस्तित्व की परिचायक हैं | पूर्णत: प्रकृति पर निर्भर रहने वाली इस जनजाति ने प्रकृति को ही ईश्वर मान अपने-आप को उनके प्रति समर्पित किया था |

आदिवासियों ने कभी दूसरों की भूमि पर नजर नहीं डाली थी | पर अपने जमीन की रक्षा का अधिकार सभी को है | प्रकृति को ईश्वर मानने वाली इस जनजाति ने; जब-जब भी किसी ने उनकी भूमि पर कूदृष्टि डाली थी, तबतब अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए उलगुलान किया था | साहित्य अध्ययन के आधार पर आज यह जनजाति पूंजीपति, साहूकार, ठेकेदार, आधिकारी वर्ग, सामंतवादी व्यस्था का शिकार हो रही है | भोली-भाली, अनपढ़ मूलनिवासियों की जमीन को धोके से हड़प लिया गया | उन्ही के जमीन पर उन्हें गुलाम बनाया | और उनके द्वारा सृजित अत्याचार, शोषण, बलात्कार, उत्पीड़न, आर्थिक विषमता, दरिद्रता

की चक्की में पिसना पढ़ा | अपनी ही जमीन पर खुद को गुलाम पाना और ऊपर से अन्याय-अत्याचार, बलात्कार, शोषण आदि से गुजरना उनके लिए मुह बाँधकर मूक टीस की वेदना, पीड़ा को सहने के बराबर था | जिस जल, जंगल, जमीन पर उनका सम्पूर्ण जीवन निर्भर था, जब उसी को उनसे छीन लिया जाय तब उन्हें भूक से मरने या विवश होकर पेट की आग को बुझाने के सिवा और कोई कार्य नहीं बचा था | कांक्रेट के जंगलों ने उनके जंगलों को ग्रसित कर दिया था | वे तन और मन से बेसहारा, अनाथ बन चुके थे | उनकी ऐसी दशा के लिए जिम्मेदार व्यवस्था के प्रति एक न एक दिन उलगुलान होनी ही थी | जो तन और मन के साथ साहित्य के माध्यम से भी हुई |

जब शिक्षा का दूध पीकर मूलनिवासियों ने अपनी वास्तविक छवि को देखा, तब जागरूक आदिवासियोंने विभिन्न क्षेत्रों में क्रांति की मशाल को जलाया | स्वअस्तित्व, समाज अस्तित्व, अस्मिता की लढाई के लिए उन्होंने कमर कसली | समाज, राजनीति, साहित्य आदि में अपनी सुरक्षित पहचान के लिए व्यवस्था के विरुद्ध उलगुलान आरभ हुआ | कहा जाता है कि तलवार और तीर से कुछ लोगों को आहत किया जा सकता है, पर कलम से एक साथ हजारों को आहत किया जा सकता हैं | उन्होंने कलम उठाई और क्रांति आरंभ हो गई | आदिवासियोंने अपनी पीड़ा, टीस, दर्द, उपेक्षा, दरिद्रता, अभाव आदि के भोगे हुए सत्य को साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया | साहित्य ने अबतक उनकी दबी हुई आवाज को सशक्त मंच प्रदान किया | यही कारण है कि आज महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, बंगाल, आन्द्र, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखंड, अंडमान-निकोबार आदि देश के प्रान्तों में मराठी, हिंदी विभिन्न भाषाओं में आदिवासियों ने लिखना आरभ कर दिया है | मात्र इतना ही नहीं बल्कि उन्होंने अपनी बोली संताली, कुडुख, मुंडारी,नेपाली,बोरो गारो, कार्बो, राभा, तिवा, लेपचा आदि में साहित्य विपुल मात्रा में लिखना शुरू कर दिया हैं | इस साहित्य का अध्ययन करने पर ज्ञात होगा कि इस पर बिरसा मुंडा, महात्मा ज्योतिबा फूले, शाहु, डॉ.बाबा साहेब आंबेडकर जी जैसे महापुरुषों के क्रन्तिकारी विचारों का प्रभाव देखा जा सकता हैं |

जिन साहित्यकारों ने आदिवासी साहित्य को विभिन्न भाषाओँ में कविता, कहानी, उपन्यास, आत्मकथा आदि विधाओं के माध्यम से समृद्ध किया हैं | उनमें हिंदी भाषा में अनुज लुगुन, निर्मला पुत्तुल, संजीव, रमणिका गुप्ता, भगवानदास मोरवाल, मैत्रेयी पुष्पा, वीरेंद्र वीर, राकेस वत्स, मधुकर सिंह, शानी, राजेन्द्र आवस्थी,शानी, मधुकर सिंह, देवेन्द्र सत्यार्थी, रांगेय राघव आदि का नाम लिया जा सकता है | मराठी तथा अन्य भाषाओँ के साहित्य में हरिराम मीणा, वंदना टेटे, रामदयाल मुंडा, करमसिंह मुंडा, उषाकिरण आत्राम, वाहरु सोनवने, सुषमा असुर, वाल्टर भेंगरा'तरुण', गोविन्दगारे, सिंधुताई सपकाळ, पार्वतीबाई ठकार, शंकर विनायक, सुधीर फड़के, अनुताई वाघ, विनायक तुकाराम, गोदावरी पलसेकर, श.रा.भिस्से,

श्रीराम उतराहे, वि.रा.हाड्प, सहस्त्रबुद्धे, ना.रा.शेंडे, वाहरू सोनवने, भुजंग मेश्राम, प्रभु, राजगडकर,ममंग देई, ल्यांगसोंग तमसांग, भूपेन नारजारी, मिनिमान लालू, चन्द्रकांत मुरासिंग, चारु मोहन रामा, महादेव टोप्पो, बिरेन्द्र महतो, जितेन्द्र वासवा, ततंग ताकी, ताखे कानी, ब्रजेन्द्र कुमार ब्रह्म, मंगलसिंह जोवारी, मनोरंजन मार्क, लोग्कान तेरान, रोबिन न्गन्गोम, सी. लाइजोमा, एल.टी. लियाना खियाड, काखिवोयु योमे, सबिता देबबर्मा आदि का नाम उल्लेखनीय है |

आदिवासी साहित्य का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि आदिवासी जनजाति अपने ही जमीन पर बेगाने हो गये है | वे अपने आप को असुरक्षित, अस्तित्वहीन पा रहे हैं | सामंती व्यवस्था ने भोले-भाले, अनपढ़ आदिवासियों की जमीन, जल, जंगल, खेत खलियान, गाय भैंसे, घर आदि को जाने अंजाने उनसे छीन लिया | और उन्हीं की ही जमीन पर उन्हें गुलाम बनने के लिए विवश किया | गुलामी, मजदूरी यहाँ तक होता तो ठीक होता पर उनको आर्थिक और मानसिक गुलाम भी बनाया गया | उन्ह पर अन्याय अत्याचार, शोषण का चाबुक चला कर लहू लुहान किया गया | उनकी स्त्रियों को जबरन, विवश आदि मार्गों द्वारा शरीर की इच्छा पूर्ति का साधन बनाया गया | संजीव के साहित्य में आदिवासियों की ऐसी तस्वीर को देखा जा सकता है | उन्होंने आदिवासियों की समस्याओं, संस्कृति, समाज जीवन, जीवन संघर्ष, राजनीतिक शिकार, सामंतवादी व्यवस्था, जल, जंगल, जमीन, खदान, लुटते उजड़ते खेत, बिकते मवेशी, बिकता शरीर, बलात्कार, बदलता व्यवसाय, शिक्षा, आर्थिक विपन्न जीवन आदि का ह्रदय स्पर्शी चलचित्र संवेदनशील पाठक के सम्मुख रखा हैं | आदिवासियों के जीवन संघर्ष एवं असुरक्षितता को देख कर ह्रदय पिघल जाता है |

संजीव की "टीस" कहानी ऐसे ही जीवन सघर्ष, सामंत वादी व्यवस्था का शिकार आदिवासी जनजाति, आक्रोश, विद्रोह, उनकी संस्कृति, खान पान, संगीत, नृत्य के साथ उनके अभावों आदि का जीवित चित्र दृष्टिगोचर होता हैं | कहानी में कांकडडिहा गाँव का आदिवासी सपेरा शिबू काका सामंतवादी व्यवस्था का शिकार होता है | वह पहले तो अपने ही जमीन, खेत से वंचित होता है | जिस पर उसका और उसके परिवार का पेट पलता था | व्यवस्था ने उसे छीन लिया | यही कारण था कि उसे सपेरा बनना पड़ा | जो सापों का खेल दिखाता हैं | दूसरे शहरों में जाकर साँप बेचता है | पंचानन भट्टाचार्य जो मंदिर का पुजारी है | शिबू काका के अनुपस्थिति में उसकी पत्नी मताई के साथ कुकर्म करता है | शिबू काका के हाथों मताई तो मारी जाती है पर पंचानन बच जाता है | और उलटे शिबू काका व्यवस्था का शिकार हो जेल पहुँच जाता हैं | बदला लेनी की टीस रह रह कर उसमें उभरते रहती है | और जेल से भागने के फिराक्त में मर जाता हैं | कहानी में व्यवस्था के प्रति आक्रोश प्रकट करने के लिए उनकी तुलना वह सापों से करता हैं |

" मंदिर का पुजारी पंचानन भट्टाचार्य | जब तो त्रिपुंड लगा के, पूजा के लिए आया जनाना लोग को घूरता तो लगा कि गोखुर छाप नाग फन फुला के घूर रहा है | मंतर किटकिटाते बखत हम आदिवासी लोग को देखेगा तो फुफकारेगा भागो साला लोग, जाके खिस्तान बन जाओ, इहाँ काहें आता ! साब,देख लेना उसको, अगर साँप कामडाया [डंसा] तो साँपई मर जाएगा, वो नहीं मरेगा |" १.

जहाँ अपनी जमीन, जंगल, खेत खलियान, घर सबकुछ व्यवस्था ने छीन लिया | और गुलाम, मजदूर बनाया | वहाँ स्त्री कहाँ सुरक्षित रहने वाली थी |

स्त्री मात्र उनके लिए भोग्य वस्तु थी | पीछे समाचार चैनल और समाचार पत्रों में पढ़ा था | अंडमान निकोबार की आदिवासी स्त्रियों को बिस्किट के बदले नग्न नाचने के लिए कहा जा रहा हैं | लोग उसे देख कर नेत्रों से अपनी इच्छा पूर्ण कर रहे हैं | उन पर हँस रहे हैं | इतना ही नहीं बल्कि आदिवासी युवतियों पर कई बार बलात्कार होता है | पर हर बार पीड़ित की आवाज दबा दी जाती रही है | साम, दाम, दंड भेद का स्तमाल किया जाता रहा है | आज भी न जाने कितनी आदिवासी युवतियाँ इस पीड़ा का शिकार हो रही है | किन्तु कभी भी समाचार चैनल या समाचार पत्रों में उनके ख़िलाफ आवाज नहीं उठाई जाती है | किसी शहरी या उच्च वर्ग की स्त्री पर बलात्कार होता है, तब सरे विश्व में उसके खिलाफ आवाज बुलंद किया जाता है | मिडिया तो रहनुमा बन जाती है | आदिवासी स्त्री अपने आप को असुरक्षित समझने लगी है | कोंक्रेट की जंगल से उपजी व्यवस्था ने जंगल की व्यवस्था को तार तार कर दिया | वहाँ के विषैले जहर ने वास्तविक जंगल को भी ग्रस्त कर दिया था |

जिनसे स्त्री आपने आप को सुरक्षा की उम्मीद करती थी, जब उनसे ही अपेक्षा हो जाती है, तब संताल आदिवासी कवियत्रि निर्मूला पुत्तुल अपनी कलम से अपनी कविता के माध्यम से उनसे जवाब पूछती है |

"कैसा बिकाऊ है तुम्हारे बस्ती का प्रधान
जो सिर्फ एक बोतल विदेशी दारु में रख देता है
पूरे गाँव को गिरवी
और ले जाता है कोई लकड़ियों के गट्ठर की तरह
लादकर अपनी गाड़ियों में तुम्हारी बेटियों को
हजार पाँच सौ हथेलियों पर रखकर
पिछले साल धनकटनी में खाली पेट बंगाल गयी पड़ोस की बुधनी
किसका पेट सजाकर लौटी है गाँव ?"२

जब कोंक्रेट की चकाचौंध दिखाकर भोली भली आदिवासी युवती को अपने वश में किया जाता है | तब कवियत्रि बाहर वालों से अपेक्षा नहीं करती | अपने जंगल के आदिवासियों को फटकार लगाती हैं |

जो तुम्हारी भोली भाली बहनों की आँखों में
सुनहरी जिन्दगी का ख्वाब दिखाकर
दिल्ली की आया बनानेवाली फैक्ट्रियों में
कर रही है कच्चे माल की तरह सप्लाई
उन सपनों की हकीकत जानो चुड़का सोरेन
जिसकी लिजलिजी दीवारें-पस्-पाँव-रखकर
वे भागती हैं बेतहाशा पश्चिम को ओर |" ३

जल, जंग, जमीन पर जीने वाला आदिवासी समुदाय तबतक खुश था, जबतक की कोंक्रेट के जंगल ने उनके जंगल पर आक्रमण नहीं कर दिया था | शहर की अबोहवा जब जंगल पहुँची तब उसने भोली भाली आदिवासियों जनजाति को अपने स्वार्थ के लिए प्रयुक्त किया | विज्ञान, आधुनिकता जंगल के लिए शाप बनकर आया था | खदानों, जमीन में छिपी सम्पत्ति के लूट के लिए पूंजीपतियों, ठेकेदारों, कारखानदारों आदि ने उनकी जमीन उनसे छीन ली | और उनकी ही जमीन पर उने मजदूर बना दिया | इसका परिणाम आक्रोश में हुआ | आक्रोश ने विद्रोह का रूप लिया | उषा किरण आत्राम अपनी कविता 'पलाश की लाल अंगार हो !' में विद्रोह का बिगुल बजाते हुए, आदिवासी स्त्रियों को रातरानी बनने की बजाए, लाल अंगार बनने का संदेश देती हैं |

" होना हो–तो पलाश की लाल अंगार हो
धधकती लाल लाल अंगार
यही तेरा शृगार !" ४.

आदिवासियों ने समजा कि शिक्षा से ही उनकी आझादी हो सकती है | किन्तु इसका विपरीत भी परिणाम हुआ | लोग जंगल छोड़-छोड़ कर शहर जाने लगे | शहर के बाजार को अपनाने लगे | अपनी संस्कृति, अपना अस्तित्व, अस्मिता को भूल कर शहर की संस्कृति को अपनाने लगे | आदिवासियों द्वारा आदिवासियों की संस्कृति, अस्तिव, अस्मिता, पहचान, भाषा, वेशभूषा आदि को भुलाते हुए जब निर्मला पुत्तुल जैसी कवियत्रि ने देखा, तब वह खामोश कैसे बैठती |

" संथाल परगना / अब नहीं रह गया संथाल परगना !
बहुत कम बचे रह गये हैं
अपनी भाषा और वेशभूषा में यहाँ के लोग
बाजार की तरफ भागते
सब कुछ गड्डमड्ड हो गया है इन दिनों यहाँ
उखड़ गये है बड़े बड़े पुराने पेड़
और कोंक्रिट के पसरते जंगल में
खो गयी है इसकी पहचान ....|" ५.

आदिवासी जो यहाँ का मूलनिवासी हैं | उसकी पहचान मिटाने का बौद्धिक षड्यंत्र किया जा रहा है | आदिवासी जनजाति जो जंगल में आदिम समय से रह रही हैं | जिसकी जिजीविषा जंगल पर निर्भर हैं | उसे ही अब 'वनवासी' शब्द से सम्बोधा जा रहा हैं | रामयण काल में राजा राम को भी वनवास जाना पढ़ा था | तो क्या इस आधार पर वे आदिवासी हो गये ? नहीं | ऐसे अवसर पर मराठी आदिवासी साहित्यकार भुजंग मेश्राम इसके खिलाफ आवाज उठाते है | वे अपनी कविता 'गाँवबांधनी' में अपना विरोध प्रकट करते हुए कहते है,

" वे हमे सौटक्का सबसीडी इसीलिए दे रहे हैं
ताकि उसके बदले में
आदिवासियों का नामकरण
'वनवासी' किया जाये |" ६

आदिवासियों की पहचान पर जब खतरा मंडराते हुए युग सजग साहित्यकार इसकी ओर देखता है, तो वह कैसे खामोश बैठता | दलित साहित्यकार प्रो.दामोधर मोरे जी इस संदर्भ में कहते है,

" आदिवासियों के लिए 'वनवासी' शब्द का प्रयोग अभी ज्यादा पैमाने पर और जानबूझकर किया जा रहा है | लेकिन फूले आम्बेडकर की चेतना की आग जिनमें धधक रही है, वे 'वनवासी' शब्द से अत्यंत नफरत करते हैं | उनकी मान्यता है कि आदिवासी यहाँ का 'मूल निवासी'है | जिसका अहसास आदिवासी शब्द से ही होता है | वनवासी कहकर आदिवासी की आदिम ऐतिहासिक पहचान को ही पैर तले रौंदने की साजिश चल रही है |" ७

इधर भारत में लगभग १००० से भी अधिक आदिवासी साहित्यकार अपनी बोली में लेखन कार्य कर रहे है | किन्तु कुछ ही साहित्यकार प्रकाश में हमें दिखाई देते हैं | एक और आदिवासी साहित्य समृद्धि की ओर अग्रेसर है, तो वहीं दूसरी और गैर आदिवासी साहित्यकार अपने आप को आदिवासी

साहित्यकार बताकर जब प्रसिद्धि एवं पुरस्कार हासिल करते है और मूल आदिवासी इन से वंचित रहते है | तब वे इसका विरोध करते हैं | मुंडारी गीतकार करमसिंह मुंडा अपना आक्रोश प्रकट करते हुए कहते है,

" आदिवासी के नाम पर गैर आदिवासी बोलेंगे | वही लिखेंगे, वही छपेंगे, पद, पुरस्कार वहीं बाटेंगे और वहीं लेंगे | कुछ आदिवासियों को वे अपना पिछलग्गू बनायेंगे जो जिंदिगी भर उनका फेका टुकड़ा पाने की आस में उनके पीछे पीछे घूमेंगे और उनका गीत भी गाएँगे | पर आदिवासी विचार दर्शन ऐसे परजीवी गंदगियों को साफ कर देगा |" ८

आदिवासी शहरी सभ्यता के सम्पर्क में आया | उसने शिक्षा ग्रहण करना आरभ कर दिया | उन्होंने अपनी, वेदना, पीड़ा, आभाव, शोषण, अन्याय, अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाई | इसका परिणाम यह हुआ कि शहरी कोंक्रेटीकरण की सभ्यता ने जंगल में प्रवेश किया | आदिवासियों के जीवन को सुधारने एवं लिक में लाने का कार्यआरभ किया गया | पर आदिवासियों के आधुनिकीकरण के चलते आदिवासियों ने अपनी संस्कृति, धर्म, भाषा की पहचान को असुरक्षित पाया | इस असुरक्षितता के चलते आदिवासी साहित्यकारों ने इसके खिलाफ आवाज बुलंद की | रामदयाल मुंडा इसका विरोध करते हुए कहते है,

" आदिवासी जन के खिलाफ एक युद्ध लगातार चल रहा है | उसे विकास कहा जाता है | इस विकास ने आदिवासी धर्म, भाषा और संस्कृति को, उनकी पूरी पहचान को खतरे में डाल दिया है | इसीलिए हम आदिवासी इस एक तरफा विकास [युद्ध] के विरोधी हैं और हमेंशा रहेंगे | " ९

आदिवासियों का दर्द, उनकी पीड़ा, समस्याओं को मात्र आदिवासी परिक्षेत्र में भ्रमण करने से या उनपर कुछ लिख देने से हमें उनकी सच्ची तस्वीर नहीं दिखाई देगी | आदिवासियों को भीतर से जानने और महसूस करने के लिए तो कोई आदिवासी साहित्यकार द्वारा भोगे हुए सत्य को जानना पड़ेगा | भोगा अनुभव किया हुआ साहित्य ही हृदय को छूता हैं | कोई गैर के द्वारा नहीं | आदिवासी साहित्यकार वंदना टेटे यही बात अनुभव करती है,

" आदिवासी समुदायों पर सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में हुए अध्ययन एक भ्रामक, नस्लीय और औपनिवेशिक तस्वीर पेश करते है | हिंदी साहित्य लेखन तो वैसे भी लेखकों का सेकंडरी काम है | उनका प्राथमिक पेशा तो कुछ और होता है | ऐसे में टेबल, इंटरनेट, एन्थ्रोपोलोजी की पुस्तकों और कुछ दिन आदिवासी इलाके में घूम घामकर जुटायी गयी जानकारियों से कोई कैसे आदिवासी जीवन की सच्ची कहानी बयान कर सकता है ?" १०

अक्सर ऐसा होता आया है कि जो लिखित होता है, वहीं साहित्य होता हैं | बात में तो दम है | किन्तु ऐसे में हमारे सम्मुख एक प्रश्न उपस्थित होता है कि जिनकी बोली अभी भाषा ही नहीं बन पाई | जो सभ्यता, साक्षरता से कोसो दूर है | क्या उनका सहित्य नहीं होता है ? उनका भी तो साहित्य होता है | जिसे हम लोकसाहित्य कहते है | जो पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप में समृद्ध होते आया है | यह साहित्य

लिखित साहित्य से भी बेहतर है, कहना असंगत न होगा | आज जब यह साहित्य छुटपुट लिखित रूप में हमारे सम्मुख आ रहा है, तो उसे पढ़कर हम उसके अबतक के अभावों को महसूस करते है | आदिवासियों का लोकसाहित्य भी जो अपनी पहचान खो रहा है, इसके प्रति ध्यानआकर्षित करते हुए मराठी साहित्यकार वाहरू सोनवने जी कहते है,

" लिखित ही केवल साहित्य होता है यह कहना ही आदिवासियों की दृष्टी से असंगत है | साहित्य और कला, साहित्य और जीवन के बीच जो दीवारें समाज में खड़ी हैं, उन दीवारों का आदिवासी समाज में कुछ भी स्थान नहीं है | इन व्याख्याओं को बदलना जरूरी है |" ११

आदिवासी तब बहुत दुखी होता जब उसके प्रति पूरा का पूरा समाज बहिष्कार के हत्यार से उसे लहुलुहान करता है | उसकी पहचान ही उसकी दुश्मन बना दी जाती है | उनके खिलाफ एक बौद्धिक षड्यंत्र किया जाता हैं | हम एक पल सोच सकते है कि जिनकी पहचान ही दुश्मन बना दी जाती है, तब उनका जीवन कैसा बीतता होगा | वे क्या अनुभव करते होंगे | पौराणिक काल से लेकर आजतक असुरक्षितता, हीनता से भरा जीवन जीने वाली जाति आज भी अपनी पहचान के लिए संघर्ष रथ दिखाई देती है | वह अपनी पहचान को एक दर्जा देना चाहती है | आदिवासियों की ऐसी ही एक जाति असुर है | जिसकी पहचान को अपनी अस्मिता, अपना आत्मगौरव बताती है, असुर साहित्यकार सुषमा असुर |

" हे धरती के पुरखों
हे आसमान के पुरखों
ओ हमारे माता पिता
ओ सभी असुर बुढा बुढ़िया
हम सीखेंगे तुम्हारी तरह नाचना
हम करेंगे तुम्हरी तरह शिकार
उन सभी जानवरों का
जो असुरों के घर खोद रहे है
जो हमारे झरनों को
फुसला बहला रहे है
जिन्हें धरती और इन्सान
खाने की लत है
हम जरुर जियेंगे

तुम्हारी तरह ही

पठार की तरह निश्चित निश्छल

तुम्हारे रचे इस असुर दिसुम [देश] में .|" १२

जिस प्रकार समाज द्वारा एक पूरी की पूरी जाति निंदनीय, तिरस्कार, उपेक्षा का शिकार होती है | उसी प्रकार जब आदिवासी साहित्यकार अपने भोगे हुए साहित्य को गैर आदिवासी समाज द्वारा उपेक्षित पाता है , तो वह नाराज हो जाता है | वह चाहता है कि समाज उसकी संस्कृति, धर्म, भाषा, नृत्य संगीत, खान-~~पान,~~-वेश भूषा के साथ उसके दुःख, दर्द, पीड़ा, उपेक्षा, अपमान, तिरस्कार, शोषण आदि को भी जाने महसूस करें | पर जब ऐसा नहीं होता है, तब वह अपनी पीड़ा को व्यक्त करते हुए कहता है,

" हिंदी का साहित्य समाज हम आदिवासी लेखकों को कभी नहीं अपनाएगा | उनको रामायण महाभारत लिखने वाला आदिवासी चाहिए | आदिवासी अपना बात लिखता है वह उन सबको नहीं पचेगा | हमलोग तो असुर हैं | काला आदमी | महिषासुर के पक्ष में कोई नहीं आएगा | न साहित्य में, न समाज में |" १३ वाल्टर भेंगरा 'तरुण'

जब जब आदिवासी जनजाति के अस्तित्व, अस्मिता, संस्कृति, पहचान पर खतरा मंडराया तब तब बिरसा मुंडा जैसे क्रांतिकारियों ने विद्रोह की मशाल हाथ में थामी थी | किन्तु व्यवस्था द्वारा समय समय पर उसे दबाने का सक्रिय प्रयास भी होता रहा | जितनी बार आवाज दबा दी जाती रही है, उतनी बार उतनी ही तेजी से, ताकत से किसी न किसी ने अपनी शक्ति का परिचय व्यवस्था को भी करवाया है | आनुज लुगुन नामक तरुण आदिवासी साहित्यकार ऐसी ही पूंजीपति व्यवस्था का विरोध अपनी कविताओं में करता हैं | उनकी कविता एक ओर युग पुरुष को याद करते हुए नतमस्तक होती है, वहीं उनका आदर्श आदिवासियों के सम्मुख प्रस्तुत करती है | वे बिरसा मुंडा को याद करते हुए व्यवस्था को चेतावनी देते हुए 'बिरसा बाबा' कविता में कहते है,

" इसी जंगल के बीच

अपने स्वत्व के लिए उठी थी

बाबा बिरसा की चीख ----

लहरा उठा थी

सरsss...sss...र ...ss....!!!

सिद्धू कान्हा और तिलका की तनी धनुष से टूटा तीर

इनकी मूर्तियों तले चौराहे पर

उठती है आज भी चीख

इसी चीख के बीच गंदगी

कान बंदकर दुबक जाती है

उसे पता है यह घर फूटने की चीख है |" १४

बिरसा मुंडा के साथ एकलव्य को भी अपनी कविता में आदिवासी संस्कृति का परिचायक रूप में पस्तुत किया है | अनुज लुगुन आदिवासी साहित्य का उभरता हुआ कोहिनूर है | कम उम्र में ऐसी समझदारी, काबिले तारीफ है |

वस्तुतः हिंदी एवं आदिवासी साहित्य का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि पौराणिक काल से लेकर आधुनिक काल तक आदिवासी जनजाति जो सारे विश्व में फैली हुई हैं | उपेक्षा, अपमान, आन्याय अत्याचार, बहिष्कार-बलात्कार, दर्द पीड़ा टीस का शिकार हुई | विश्व के साथ भारत में जल, जंगल, जमीन पर आधारित, मूलनिवासी के रूप में रहने वाली, आदिवासी जनजाति हमेशा से ही अपने अस्तित्व, अस्मिता, पहचान के लिए संघर्ष रत रही हैं | अनपढ़ आदिवासियों के सीधपन का फायदा उठाकर उनकी ही जमीन से उन्हें वंचित कर, उनकी ही जमीन पर उन्हें गुलाम बनने के लिए विवश किया गया | उनका शोषण सामाजिक, राजनितिक, संस्कृतिक, धार्मिक, साहित्यिक, आर्थिक प्रत्येक क्षेत्र में किया गया | शहरी चकाचौंध ने एक और आदिवासी स्त्री इच्छा पूर्ति का साधन बनाई गयी तो दूसरी और आदिवासी शिक्षित समाज के एक तबके को आदिवासियों के शोषण की सीडी बनाई गयी |

किसी भी बात की मर्यादा जब टूट जाति है, तब उसके खिलाफ आक्रोश और फिर वोद्रोह का जन्म होता हैं | आदिवासियों ने शिक्षा के नेत्र से जाना के वे असुरक्षित हैं | उन्हें अपनी अस्मिता, अस्तित्व के लिये लड़ाई लड़नी हैं | एक लड़ाई साहित्य के माध्यम से हुई | आदिवासी साहित्यकारों ने अपने भोगे हुए सत्य के साथ आदिवासी जनजाति पर होनेवाले आन्याय आत्याचार, पीड़ा दर्द, शोषण, विभिन्न समस्याओं की ओर ध्यान केन्द्रित किया | वहीँ आदिवासी जीवन, जीवन संषर्ष, संस्कृति, संगीत, गीत, लोकनृत्य, लोकसाहित्य, के साथ आतीत गौरव को भी जीवित किया |

शहराती सभ्यता से प्रभावित आदिवासी जनजाति एक ओर आदिवासी अपनी मूल पहचान भाषा, वेशभूषा, लोकनृत्य, लोकसाहित्य, संस्कृति से दूर जा रही हैं, तो दूसरी और जागरूक आदिवासियों द्वारा उसी पहचान को पाने की कोशिश जारी हैं | मुझे लगता है कि सामजिक जागृति के साथ आदिवासियों को उनकी मूल संस्कृति, अस्मिता, अस्तित्व, जल, जंगल, जमीन को ठेस न पहुँचाते हुए |

यदि उनको प्रगति के प्रवाह में लाया जाये तो यह हमारे लिए और पर्यावरण के लिए ठीक रहेगा | ऐसा कहना असंगत नहीं होगा |

सन्दर्भ:-

१ कथानंद-सम्पादक जमादार/गड़पायले/परिहार, पृष्ठ सं.९२

२. नगाड़े की तरह बजते है शब्द –निर्मला पुत्तुल पृष्ठ.सं.२०

३. नगाड़े की तरह बजते है शब्द –निर्मला पुत्तुल पृष्ठ.सं.२१

४. बयान सं.मोहनदास नैमिशराय,अंक अक्तूबर २०१३,पृष्ठ.सं.३२

५.नगाड़े की तरह बजते है शब्द –निर्मला पुत्तुल पृष्ठ.सं.२६

६. आदिवासी:साहित्य यात्रा सं.रमणिका गुप्ता, पृष्ठ.सं.७८

७. आदिवासी:साहित्य यात्रा सं.रमणिका गुप्ता, पृष्ठ.सं.७८

८.https://www.facebook.com/AdivasiLiterature/photos/a.159730254221168.1073741827.159723914221802/296289613898564/?type=1

९.https://www.facebook.com/AdivasiLiterature/photos/a.159730254221168.1073741827.159723914221802/296289613898564/?type=1

१०.https://www.facebook.com/AdivasiLiterature/photos/a.159730254221168.1073741827.159723914221802/296289613898564/?type=1

११.https://www.facebook.com/AdivasiLiterature/photos/a.159730254221168.1073741827.159723914221802/296289613898564/?type=1

१२.https://www.facebook.com/AdivasiLiterature/photos/a.159730254221168.1073741827.159723914221802/296289613898564/?type=1

१३.https://www.facebook.com/AdivasiLiterature/photos/a.159730254221168.1073741827.159723914221802/296289613898564/?type=1

१४. कवि अनुज लुगुन – ''ताजे फूल की तीखी खुश्बू सी कविता''Sheershakblogspot.in